P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-1* September- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

समकालीन हिन्दी कविता में मूल्य चेतना और राजकमल चौधरी का काव्य

आलोक कुमार पाण्डेय
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
जयप्रकाश विश्वविद्यालय,
छपरा, बिहार

सारांश

समकालीन कविता नवीन मूल्य–रचना–प्रक्रिया से निरंतर गुजर रही है जिसके फलस्वरूप मूल्य के क्षेत्र में उथल–पुथल मची हुई है। मूल्य–परिवर्त्तन का संबंध चेतना और उसके परिवर्त्तन से है। इसके फलस्वरूप जो कुछ परिवर्त्तन घटित होता है, वह नयी रूचि का परिचायक है। इस दृष्टि से साठोत्तरी कविता के कवियों की सौंदर्याभिरूचि बदली हुई है। अभिरूचि के परिवर्त्तन की यह दिशा नकारात्मक नहीं है। यह परिवर्त्तन नयी कविता के गर्भ से फूटने लगा था। समर्थ कवियों ने जनवादी कविता का पक्ष–समर्थन करते हुए जनवादी चेतना की अभिव्यक्ति के अनुरूप भाषा–शैली और शिल्प को ग्रहण करना शुरू कर दिया था। मुक्तिबोध इनमें सबसे आगे थे। बाद में अन्य कवियों के अतिरिक्त राजकमल चौधरी और धूमिल ने इस अभियान को आगे बढ़ाया। इस दृष्टि से राजकमल चौधरी का योगदान महत्त्वपूर्ण है। समकालीन कविता की भाषा में जिस भयावह सौंदर्य के संवहन की क्षमता होनी चाहिए, वह काव्यगत प्रयोग के आश्रय से ही विकसित हुई। राजकमल चौधरी की भाषा–शैली अन्य कवियों से भिन्न रही है। यह उनकी मौलिकता है। राजकमल चौधरी साठ के बाद के कवियों में अत्यंत सशक्त कवि के रूप में उपस्थित हुए।

मुख्य शब्द : हिन्दी थिसारस ,आप्तवाक्य, मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद, यथार्थवाद, मनोविश्लेषणवाद, अतियथार्थवाद, उपनिवेशवाद, उपभोक्तावाद, मिथकायन, बर्हिगमन, प्रत्यागमन, महा–सादृश्यत्व, आत्मपरकता।

प्रस्तावना

समकालीन कवि असामान्य युग में रह रहा है। मानव–समाज भयानक रूप से विषमताग्रस्त हो गया है। चारों ओर मूल्यों के पतन की स्थिति है। शोषण और उत्पीड़न पहले से बहुत अधिक बढ़ गया है। समाज राजकमल चौधरी सभ्यता की लूट–खसोट से परेशान है। सांस्कृतिक मूल्यों की सर्वत्र हत्या की जा रही है। वह कहीं भी सुरक्षित नहीं है। चारों ओर बर्बरता का माहौल है। राजनीति ने न्याय, शांति एवं शिक्षण–संस्थाओं को बरबाद करके रख दिया है। संपूर्ण विश्व का वातावरण विषाक्त हो गया है। नारी जाति की दुर्दशा हो रही है। कवि–कर्म एक जोखिम भरा काम बन गया है। साठ के बाद के कवियों ने अपने गंभीर उत्तरदायित्व को समझा है। उन्हें अपनी सौंदर्याभिरूचि का विस्तार और परिष्कार किया है। उन्हें अपने अनुभव क्षेत्र का विस्तार किया है तथा उसकी अभिव्यक्ति के लिए कठिन साधना की है। राजकमल चौधरी भी इसी तरह के मूल्य–बोध और जीवन–बोध से संपन्न समकालीन कवि हैं। साठोतर हिंदी कवियों की मूल्य–दृष्टि एवं राजकमल चौधरी के काव्य में मौजूद मूल्य–संबंधी विभिन्न संदर्भों की सार्थकता एवं प्रासंगिकता के परख करने की आवश्यकता है। इन्हीं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विषय प्रस्तावित किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

आधुनिक जीवन की नींव ही संदेह की शिला पर रखी गयी है। जिस समय कोई मूल्य स्थापित होता है, उसी समय से उसपर संदेह भी आरंभ हो जाता है। मूल्य का संबंध आचार से होना चाहिए। जब वह अपने मूल से वियुक्त हो जाता है, तब वह निष्प्राण शब्दमात्र बनकर रह जाता है। ऐसी स्थिति में उन शाब्दिक मूल्यों के प्रति जो प्रतिक्रिया होती है, वह असहमति, विरोध, आक्रमण, अनास्था, ध्वंस आदि के रूप में सामने आती है। मूल्य के संदर्भ में साठोत्तरी कवियों की प्रतिक्रिया एवं राजकमल चौधरी के योगदान को रेखांकित करना ही इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है।

शोध–विधि

समकालीन हिंदी कविता के विकास के अध्ययन के क्रम में विभिन्न प्रकार के मूल्यों के बदलते आधारों की परख अपेक्षित है। इसलिए इनसे संबंधित तथ्यों के संधान के लिए अन्तर्विधायी शोध–विधि (यथा नीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान आदि) एवं पाठालोचनात्मक शोध–विधि तथा इससे संबद्ध यथासंभव नवीनतम सिद्धांतों का विनियोग किया गया है। राजकमल चौधरी के काव्य में व्यक्त मूल्यों को परखने के लिए आनुभविक विधि भी अपनायी गई है। उक्त शोध को प्रामाणिक बनाने के लिए विषय के अनुरूप यथासंभव नवीनतम वैज्ञानिक शोध–प्रविधि अपनायी गई है।

शोध उपकरण

प्रस्तुत शोधालेख के लिए 'बर्फ और सफेद कब्र पर एक फूल : राजकमल चौधरी', 'ऑडिट रिपोर्ट : सं. देवशंकर नवीन', राजकमल चौधरी रचनावली, संपादक : देवशंकर नवीन, खण्ड–1 और खण्ड–2, का उपजीव्य ग्रंथ के रूप में उपयोग किया गया है, जबकि राजकमल चौधरी एवं उनकी रचनाओं से संबंधित अन्य सामग्रियों का उपयोग उपस्कर ग्रंथ के रूप में हुआ है। इन सबके अतिरिक्त संदर्भ–ग्रंथ के रूप में अन्य रचनाओं का उपयोग किया गया है। शोधालेख को तैयार करने में हिन्दी साहित्य कोश, समाज विज्ञान विश्वकोश और हिन्दी के अभिव्यक्ति कोश (हिन्दी थिसारस) से भी सहायता ली गई है। अन्य सहायक सामग्रियों के लिए इंटरनेट का उपयोग किया गया है।

प्रदत्तों का विश्लेषण

मनुष्य एक सांस्कृतिक प्राणी है और 'मूल्य' मनुष्य की सबसे बड़ी सांस्कृतिक उपलब्धि है। आधुनिक युग मूल्यों के संक्रमण का युग रहा है, इसलिए परंपरागत मूल्य व्यवस्था की परिवर्तित स्थिति देखने को मिलती है। 19वीं सदी के तीन महानुभाव– डार्विन, मार्क्स, फ्रॉयड; विचार दर्शन के क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव के संवाहक सिद्ध हुए। उनके दृष्टिकोण ने संशयवाद को जन्म दिया। उन्होंने प्राचीन और मध्यकालीन मूल्य–व्यवस्था में शामिल मिथकीय, कपोल कल्पित, अलौकिक और औदात्य जैसे आदर्शवादी तत्त्वों को खारिज कर यथार्थपरक दृष्टिकोण का समर्थन किया। फलतः विधि–निषेधपरक मूल्य–व्यवस्था का स्थान एक जटिल मूल्य–व्यवस्था ने ले लिया। इस यथार्थपरकता एवं जटिलता के मुख्य कारण उस युग के वैज्ञानिक आविष्कार थे। इन आविष्कारों के फलस्वरूप जीवन एवं जगत संबंधी मान्यताओं में क्रांतिकारी बदलाव आये। इससे औद्योगीकरण को बढ़ावा मिला और पूँजीवाद जैसी नवीन सामाजिक व्यवस्था का उदय हुआ। इस नयी व्यवस्था ने नये मानवीय संबंधों को जन्म दिया। पूँजीवादी व्यवस्था के कोख से जन्म लेनेवाले मूल्य परिस्थिति के असामान्य और तेज परिवर्तन के साथ तेजी से बदलते चले गये। मूल्य युग परिवर्तन के साथ–साथ बदलते हैं।[1] खासकर दूसरे विश्वयुद्ध के बाद विश्व–व्यवस्था के साथ ही मूल्य–व्यवस्था के चक्र भी असाधारण गति से घूमे। भारतीय संदर्भ में स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद के मोहभंग को मूल्य–परिवर्तन की दृष्टि से दूसरी प्रभावित हुआ।

पाँचवें, छठें और सातवें दशक में आर्थिक साम्राज्यवाद के विस्तार के कारण भारत सहित विश्व में वैचारिक संघर्ष की प्रखरता तेजी पर रही। वैचारिक दृष्टि से इन तीनों दशकों की कविताओं पर मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद, यथार्थवाद और अतियथार्थवाद का गहरा प्रभाव परिलक्षित होता है। इनमें भी मनोविश्लेषणवाद ने प्रयोगवाद को अधिक प्रभावित किया तो मार्क्सवाद ने प्रगतिवाद को। नयी कविता के कवियों पर इन विचारधाराओं का कवि की रूचि के अनुसार प्रभाव पड़ा। नयी कविता में जो अंतर्विरोध मौजूद हैं, आधुनिक भावबोध की व्याख्या संबंधी भिन्नता के कारण अधिक पारदर्शी रूप में उभरे हैं। कवियों के एक वर्ग ने अनुभूति की प्रामाणिकता के नाम पर अपनी आंतरिक अनुभूतियों को व्यक्त करने पर जोर दिया। कवियों के दूसरे वर्ग ने जनवादी रूझान का परिचय दिया। प्रयोगवाद, प्रगतिवाद और नयी कविता की अपेक्षा साठोत्तरी कविता का क्षेत्र अधिक व्यापक रहा है, साथ ही इसकी क्षिप्रता भी अधिक रही है। यह अनेक धाराओं को आत्मसात कर चुकी है। यहाँ मानव जीवन और जगत से संबंधित विभिन्न प्रश्नों को अप्रत्याशित ढंग से उठाया गया है, जिनमें विभिन्न प्रकार के मूल्यों से जुड़े प्रश्न भी शामिल हैं। ये समकालीन कविता की जीवंतता और जनवादी चरित्र के प्रमाण हैं। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इन प्रश्नों को कवियों ने अपने–अपने ढंग से उठाया है। सभी कवियों के सामने चुनौतियाँ एक जैसी रही हैं। इन चुनौतियों से बचकर निकल जाने की गुंजाइश नहीं के बराबर है। साठ के बाद की कविता को साठोत्तरी या समकालीन कविता कहा जाता है। समकालीन कविता की मूल्य–मीमांसा संबंधी अपना मुहावरा है। समकालीन जीवन की मूल्यशून्यता की स्थिति का उन्होंने गंभीरतापूर्वक संज्ञान लिया है। उनके दृष्टि–पथ से मूल्य से संबंधित सभी महत्त्वपूर्ण पहलू गुजरते रहे हैं। साठ से पूर्व की हिंदी कविता में मूल्यों का प्रवाह छोटी–छोटी सरणियों से गुजरता रहा है। प्रगतिवाद का एकांगी स्वर राजनीति के क्षेत्र को उर्वरता सौंपने के बावजूद एकालाप ही बना रहा। प्रयोगवादी कवियों ने संप्रेषण–संबंधी कठिनाइयों को दूर करने के लिए जो प्रयोग किये उनकी सफलता पर प्रश्न उठाये जाते रहे हैं। नयी कविता भी 'लघुमानव' की लघुता से आच्छन्न रही। इन काव्य–धाराओं की अपनी–अपनी उपलब्धियाँ रहीं हैं। समकालीन कविता पर इन उपलब्धियों का सकारात्मक प्रभाव रहा है। साठ के बाद कविता के क्षेत्र में आंदोलनों की बाढ़ आ गयी। इसका श्रेय चेतना के असमान उछाल को दिया जा सकता है। समय के इस प्रवाह में अकविता आंदोलन ने असाधारण लहर पैदा की। फिर भी यह कहा जा सकता है कि समकालीन कविता के विकास में योगदान करनेवाले कवियों ने नवीन मूल्य के विकास की दिशा में किये जानेवाले प्रयत्न को सार्थकता तक पहुँचाने की कोशिश की है।

आज के मूल्य का आधार आप्तवाक्य या शास्त्र–प्रमाण नहीं हो सकता है। आत्म–साक्ष्य ही आज के मूल्य का आधार है। इसी आधार पर समकालीन कवियों ने नवीन मूल्यों की खोज की है। मुक्तिबोध ने

नयी कविता के अंतर्गत जनवादी मूल्यों की स्थापना के लिए आत्मसंघर्ष का आह्वान किया, जबकि अज्ञेय ने व्यक्ति की स्वतंत्रता को चरम मूल्य घोषित किया। इन दोनों प्रभावशाली कवियों की वैचारिक भिन्नता के फलस्वरूप आगे चलकर मुक्तिबोध को समकालीन कविता का पुरोधा माना गया। इस संदर्भ में डॉ0 हुकुमचंद राजपाल की मान्यता है, ''हम समकालीन कविता के कवि धरातल पर तीन पड़ाव मानते हैं– पहला पड़ाव मुक्तिबोध हैं, दूसरा राजकमल चौधरी तथा तीसरा धूमिल। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है'(1964), 'मुक्ति–प्रसंग'(1966) तथा 'संसद से सड़क तक'(1972) का प्रकाशन कविता–विकास में अपना महत्त्व बना चुके हैं।... ध्यातव्य यह है कि ये तीनों कवि एक काव्यधारा के तीन पड़ाव होते हुए कथ्य एवं प्रस्तुति के धरातल पर भिन्न हैं। यदि हम मानवीय मूल्यों की प्रस्तुति को आलोचना का आधार मान लें तो ये तीनों कवि समस्या और प्रश्नातुरता की दृष्टि से एक हैं, पर मूल्यों की प्रस्तुति में भिन्न हैं।''[2] मुक्तिबोध ने मूल्यों की स्थापना के लिए रचनाकार में सैनिक का साहस और गरीब शोषित वर्ग के प्रति मानवीय करूणा का भाव अपेक्षित माना है।

समकालीन कवि युग की वास्तविकता से निरंतर टकराते रहने को आतुर रहता है। इस धारा के कवियों में वैचारिक सक्रियता देखने को मिलती है। इन कवियों ने विचार को केंद्र में रखते हुए सामाजिक–राजनीतिक–सांस्कृतिक स्थिति को जानने–समझने का प्रयास किया है। समकालीन कवि जीवन के सही संदर्भ को अपने विचार–क्षेत्र और वर्णन–क्षेत्र की परिधि से बाहर नहीं जाने देते हैं। वर्तमान परिस्थिति की सही समझ की क्षमता ही वैचारिकता है। इस धारा के कवियों के विचार उनकी अनुभूतियों को सशक्त बनाते हैं। विचाररूपी साधन के द्वारा समकालीन कवि व्यवस्था के अंतर्विरोधों को ठीक–ठीक समझने में समर्थ होते हैं। इन कवियों की कविताएँ वास्तविक जीवन के अनुभव की कविताएँ हैं। समकालीन कविता आधुनिकताबोध के स्थान पर बदलते जीवन–यथार्थ को अधिक महत्त्व देती है। इस प्रकार के नये यथार्थ को प्रकाशित करने के लिए उसे नये प्रतिमान की खोज है। समकालीन कविता का मानव न तो 'महामानव' है और न ही 'लघुमानव', बल्कि वह 'वास्तविक मानव' है। इसलिए समकालीन कविता के मानव को पहचानने में कठिनाई नहीं होती है। साठोत्तरी कविता के अंतर्गत क्षण के स्थान पर काल–प्रवाह को उसकी वास्तविक गति के संदर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

समकालीन कविता के पास जीवन के विस्फोटक और घातक अनुभव हैं। वह जीवन संघर्ष और उसकी गतिशीलता से संचालित है। शोषित समाज से उसे कच्चा माल मिलता है। वह मानव की वर्तमान स्थिति को बदलने में विश्वास करती है। यह कविता भविष्योन्मुखी कविता है। निराशाजनक स्थिति में सृजित होने के बावजूद यह मानव–जाति के भविष्य में विश्वास करती है। इस कविता के पास वर्तमान को देखने की द्वन्द्वात्मक दृष्टि है। साठोत्तरी कविता के कवियों में वैयक्तिक स्तर की प्रतिबद्धता मौजूद है। वे सभी जन–चेतना के कवि हैं। यह अस्तित्व की लड़ाई में संघर्षशील मानव–जाति के लिए प्रभावशाली साधन है। इस कविता में व्यक्त विद्रोह–भाव का संबंध व्यक्ति की व्यक्तिगत एवं सामाजिक–राजनीतिक स्थिति से जुड़ा हुआ है। साठोत्तरी कविता में अधिकारों के प्रति सजगता, संघर्षशीलता और मानव–मुक्ति का भाव निहित है। समकालीन कविता जिस आधारशिला पर खड़ी है, वह है– राजनैतिक सजगता, नवीन सामाजिक दर्शन, वैज्ञानिक एवं तकनीकी चेतना के विकास के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण। उन्होंने अपने विद्रोह को एक वैचारिक और बौद्धिक आधार पर खड़ा करने का प्रयास किया है। अतः यह कहा जा सकता है कि साठोत्तरी हिंदी कविता पूर्ववर्ती हिंदी कविता से संवेदना, भाषा, काव्य के मुहावरों आदि के स्तर पर बदल रही है। इस धारा के कवियों का विद्रोह संपूर्ण बौद्धिकता, मानसिकता और भावात्मकता से जुड़ा है। साठोत्तरी धारा के कवियों के शिल्प में भी महत्त्वपूर्ण बदलाव देखने को मिलते हैं। उनकी भाषा में भी एक प्रकार का 'रफनेस' है। उनके गद्य की लय भी जीवन की तरह टूट–फूट गयी है। ये सारे तत्त्व कवि की वस्तुस्थिति के प्रति ईमानदारी को दर्शाते हैं।

मूल्य की यथार्थ स्थिति पर इन कवियों के चिंतन की अभिव्यक्ति काव्यात्मक भाषा में हुई है। राजकमल चौधरी के काव्य का इस दृष्टि से बहुत महत्त्व है। उन्होंने मूल्यों के अन्वेषण के लिए आंतरिक और वाह्य दोनों स्तरों पर कठिन संघर्ष किया है। उन्होंने सार्थक लेखन पर बल दिया। उनके अनुसार कविता की सार्थकता इस बात पर निर्भर करती है कि आज की राजनीति में व्याप्त झूठ को वह कितनी दूर तक निरावृत कर पाती है। कविता आदमी होने के अर्थ का प्रतिपादन करती है। कविता पर सभ्यता, संस्कृति, इतिहास और परंपरा से संबंधित अनेकानेक प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने का उत्तरदायित्व है। समकालीन कवि की जागरूकता से सम्पन्न राजकमल चौधरी एक साथ ही विश्वव्यापी शोषण–तंत्र और राष्ट्रीय स्तर के उत्पीड़न के खिलाफ मोर्चा खोल देते हैं। उन्होंने पूँजीपति देशों के नेता अमेरिका की शोषणपरक नीति का प्रबल विरोध किया। उनके अनुसार अमेरिका ने धरती के मजबूत देशों को बाँटकर उसे लूटा है। उन्हें जॉनसन का अमेरिका सबल लगता है, जबकि गिन्सबर्ग का अमेरिका कमजोर। इन्हीं प्रकार की बँटी हुई स्थितियों में जीने के लिए विश्व, राष्ट्र और व्यक्ति को विवश किया जा रहा है। इस प्रकार धरती को साम्राज्यवाद के छद्म रूप से संघर्ष करना पड़ रहा है।

राजकमल चौधरी जटिल युग के जटिल कवि हैं। उनके काव्य में मूल्य–विमर्श की भूमिका मौजूद है। नीति के विधि–निषेधपरक स्वरूप के साथ ही उसके पीछे छिपे भय के भाव को भी उन्होंने खारिज किया है। व्यक्ति या व्यक्ति–समूह द्वारा निर्धारित मूल्यों का आधार भय–मुक्ति ही हो सकता है। कोई भी मूल्य अपने आप में पूर्ण नहीं होता। वह व्यक्ति या समाज सापेक्ष होता है। अतः व्यक्ति या व्यक्ति–समूह के हित के लिए ही मूल्य का निर्माण होना चाहिए, न कि भय उत्पन्न करने के लिए। भय–मुक्ति उसकी अनिवार्य शर्त होनी चााहिए। लोकतंत्र के नकारात्मक स्वरूप पर प्रहार करते हुए

उन्होंने इसे सड़ान्ध की तरह देखा है। इस लोकतंत्र में व्यक्ति को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। राजकमल चौधरी ने अपनी कविता के माध्यम से जनजीवन का इतिहास रचा है। उनका इतिहास दैनिक जीवन की सच्चाई पर आधारित है। चौधरी जी वर्तमानवादी कवि हैं। उनकी मान्यता है कि अतीत और भविष्य के नाम पर आज तक जनता को ठगा गया है। हमारे देश की जनता के सामने देश का स्वर्णिम इतिहास है, उसे स्वर्णिम भविष्य का स्वप्न दर्शन कराया जाता है, लेकिन वर्तमान अंधकार में डूबा हुआ है। कवि के शब्दों में,

''हमलोग केवल अतीत की देवमालाओं से
भविष्य ही भविष्य की फसलों से
और हरी धारियों से
सुखी और सम्पन्न होते हैं
हमें आसक्त और किये जाने के लिए विवश
करता है भविष्य
और सारा कुछ है, केवल नहीं है. वर्तमान
नहीं मेरा, नहीं तुम्हारा और नहीं मिट्टी के
इस बेजान टुकड़े का।''[3]

राजकमल चौधरी की प्रतिनिधि कविता 'मुक्ति–प्रसंग' अपने पचास वर्ष पूरे कर चुकी है, और गतिमान है। 15 अगस्त 1966 को प्रकाशित यह लम्बी कविता राजेन्द्र सर्जिकल ब्लॉक; ई–वार्ड, पटना अस्पताल में फरवरी–जुलाई, 1966 में लिखी गई। राजकमल पुस्तक माला के लिए कवि द्वारा नील पत्र प्रकाशन, कामायनी, भिखनापहाड़ी (दक्षिण), पटना–4 से इसकी 1100 प्रतियाँ प्रकाशित एवं जन्मभूमि प्रेस, पटना सिटी में पहली बार पुस्तकाकार मुद्रित हुई। इसके बाद यह कविता कई बार प्रकाशित हो चुकी है। 'मुक्ति–प्रसंग' की प्रासंगिकता का कारण राजकमल चौधरी के यातनामय जीवन, बीमारी और असमय मृत्यु नहीं है बल्कि उस तात्त्कालिक सामाजिक–सांस्कृतिक प्रक्रिया में है। उनकी कविताएँ छठे और सातवें दशक के राजनैतिक दुर्व्यवस्था, सामाजिक कुटिलता, सांस्कृतिक क्षरण, आर्थिक दुर्दशा, मानव–मूल्य और नैतिक–मूल्य के ह्रास का जीवंत दस्तावेज हैं। रोटी–सेक्स–सुरक्षा के व्यवस्था में नैतिकताओं से विमुख बुद्धिजीवियों के अनैतिक व्यवहार, खंडित अस्तित्व और आजादी के मलबे से दबे समाज की बदहाली और बर्बादियों के कारणों का प्रमाण है, जो आज तक दृश्यमान है।

राजकमल चौधरी की 'मुक्ति–प्रसंग' समय को लांघकर भविष्य की ओर उन्मुख है। इतिहास बनने से इन्कार के साथ यह कविता समय से आगे चलती रही है। हिंदी अथवा दूसरी भाषाओं में ऐसी कविताएँ बहुत कम हैं, जिन्हें यह अवसर उपलब्ध हुआ हो। निराला की 'सरोज स्मृति', मुक्तिबोध की 'अंधेरे में', राजकमल चौधरी की 'मुक्ति–प्रसंग' ऐसी ही कविताएँ हैं। इन तीनों कविताओं की एक विशेषता यह भी है कि इसमें आत्म–धिक्कार की चर्चा है। इसे मध्यवर्गीय कायरता और अकर्मण्यता की कार्रवाई मानी जाती है। 'सरोज स्मृति'– 'धन्ये, मैं पिता निर्रथक था/तेरे हित कुछ कर न सका। 'अंधेरे में'–

''अब तक क्या किया,
जीवन क्या जिया,
ज्यादा लिया और, दिया बहुत–बहुत कम
मर गया देश, अरे, जीवित रह गए तुम!!''[4]

'मुक्ति–प्रसंग'–
''आदमी को इस लोकतंत्री संसार से अलग हो
जाना चाहिए
चले जाना चाहिए कस्साबों गाँजाखोर साधुओं
भिखमंगों अफीमची रंडियों की काली और अन्धी
दुनिया में मसानों में
अधजली लाशें नोचकर
खाते रहना श्रेयस्कर है जीवित पड़ोसियों को खा
जाने से..''[5]

इटली के प्रसिद्ध मार्क्सवादी आलोचक अंतोनियो ग्राम्शी का कथन 'ग्लानि–बोध एक क्रांतिकारी भावना है।' का आशय यह है कि ग्लानि का अहसास हमें वास्तविक परिवर्तन के लिए प्रेरित करता है।

'मुक्ति–प्रसंग' मनोरंजनात्मक कविता नहीं है, यह पाठक को प्रसन्न नहीं करती, अपितु खलबली मचाती है। राजकमल चौधरी ने अपनी कविताओं से पाठकों को झकझोर कर रख दिया है। इसका कारण उनके सामाजिक एवं साहित्यिक चिंतन में निहित है। उनकी मान्यता है, ''लेखक–जो कोई भी सही अर्थ में आधुनिक है और बुद्धिजीवी है, उसे अपने जीवन और अपने समाज के हर मोर्चे पर पूरी सच्चाई, पूरी ईमानदारी के साथ पक्षधर होकर, क्रांतिकारी होकर, अपने वर्ग अपने समूह, अपने जुलूस का मुखपात्र, प्रवक्ता होकर सामने आना होगा– उसे आखिरी कतार में सिर झुकाए हुए खड़े रहना नहीं होगा।''[6]

राजकमल चौधरी की कविताएँ केवल बाहर ही नहीं आँकती, अपितु अंदर भी झाँकती हैं। चौधरी जी कविता को एक गंभीर वृत्ति मानते हैं, केवल वागाडम्बर नहीं। इसका कारण आत्मसंघर्ष से उद्‌भूत उनकी कविताएँ हैं। परिवेश के प्रति उनकी संपृक्ति का भाव उन्हें जीवंत बनाता है। इस संदर्भ में ए. अरविन्दाक्षन का कथन है, ''कवि होने के कारण रचना के दौरान झेले गए आत्मसंघर्ष का अपना महत्त्व है। कविता को वागाडम्बर का चमत्कार न मानकर परिवेश–संपृक्ति मानने के पीछे निहित मूल्य–दृष्टि ही ग्राह्य है। अक्सर यह देखने को मिलता है कि जीवन की व्यावहारिकता मूल्य–दृष्टि को रौंदती–कुचलती जाती है। तब व्यावहारिकता को कुचलने की आत्मशक्ति अर्जित करना कवि का दायित्व बन जाता है, क्योंकि वह शब्दों की क्रीड़ा नहीं कर रहा है। यह बोध निराला में था।''[7] राजकमल चौधरी भी इसी तरह के मूल्य–बोध और जीवन–बोध से संपन्न समकालीन कवि हैं।

कविता में मिथक एक ओर अतर्क्य कल्पनालोक का हिस्सा है, तो दूसरी ओर समकालीन वास्तविकता और विचार से अन्तर्सम्बन्ध है। 'मुक्ति प्रसंग' में जिस प्रकार का मिथकायन देखने को मिलता है, वह अद्‌भुत है। इसके माध्यम से जिस प्रकार वर्तमान जीवन की जर्जरता, विकृति, विभत्सता और दुर्गंधियों का दिग्दर्शन कराया गया है वह बेजोड़ है। श्री नरेन्द्र मोहन ने राजकमल चौधरी के मिथकीय योजना पर टिप्पणी करते हुए लिखा है,

''राजकमल चौधरी ने अपनी लम्बी कविता 'मुक्ति प्रसंग' में तनाव दशाओं को संतुलित करने के लिए विवरणों की नहीं, मिथकीय प्रतीकों की भी योजना की है। कविता के केन्द्र में 'उग्रतारा' जैसा प्रतीक क्रियाशील है। कविता में यह प्रतीक तीन संदर्भों में फैला और संक्रांत हुआ है। यह त्रिकोणीय संदर्भ है वर्तमान और शव का रूपक, देह और देश का महा–सादृश्यत्व, मृत्यु और काम का विरोधत्व जिसकी धुरी है नारी या वह नीलकन्या अथवा उग्रतारा। उग्रतारा को संबोधित करके कवि कहता है : 'तुम मुझे मुक्त रखती हो/और मैं तुम्हें मुक्त करता हूँ अपने मरण में अपनी कविता में।' यह मिथकीय विन्यास कविता के आशय, मंतव्य और मूल संवेदना को खोलने में सहायक बना है।''[8]

राजकमल चौधरी कुछ समय तक अकविता आंदोलन से भी प्रभावित रहे। इस आंदोलित कविता में व्यर्थताबोध, निराशा, अहं की अभिव्यक्ति जैसी नकारात्मक प्रवृतियाँ पायी जाती हैं। उनकी कविता पर अश्लीलता का आरोप भी लगाया गया है। राजकमल चौधरी की कविता की इन नकारात्मक प्रवृतियों को देखते हुए उस पर अवश्य विचार किया जाना चााहिए। इस संदर्भ में सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि राजकमल चौधरी के काव्य का मूल उत्स क्या है? इस संदर्भ में कुमार कृष्ण का कथन द्रष्टव्य है, ''साठ के बाद जिस नई पीढ़ी के आगमन की बात कही जाती है, उसमें विद्रोही पीढ़ी, क्रुद्ध पीढ़ी, श्मशानी पीढ़ी, अकविता, अस्वीकृत कविता, युयुत्सावादी कविता, प्रतिबद्ध कवितावालों की पीढ़ी भी सम्मिलित है, क्योंकि इन सभी का रूप, सभी की अभिव्यक्ति, सभी के दावे, सभी की भावनाएँ प्रायः एक–सी ही हैं और ये सभी समकालीन मानसिक स्थिति को रूपायित करने का दावा करते हैं।''[9]

राजकमल चौधरी को बंगाल की भूखी पीढ़ी के कवियों के साथ भी जोड़ा जाता है। अकविता आंदोलन के साथ तो उनका अभिन्न संबंध मान लिया गया है। इन सबके बावजूद राजकमल वही नहीं हैं, जो समझा जाता है या कह दिया जाता है। अकविता के संदर्भ में उन्होंने कहा है कि मैं राजकमल चौधरी बहुत सारी बातों में बहुत दूर तक इन लोगों के साथ हूँ, लेकिन इन लोगों में नहीं हूँ। इसी प्रकार बंगाल के भूखी पीढ़ी के कवियों ने घोषणा की कि हमारी पीढ़ी बुभुक्षित, विक्षिप्त, विकलांग, मृत्युमुखी आत्माओं की पीढ़ी है। इस पीढ़ी के कवियों के द्वारा सैकड़ों कविताएँ विकृत समाज–जीवन, और पतित मानव–मूल्यों का मजाक उड़ाने के लिए लिखी गईं। मूल्यहीनता का मजाक उड़ाने में हिन्दी कवि राजकमल चौधरी भूखी पीढ़ी के कवियों से पीछे नहीं हैं, लेकिन वे इन कवियों के पिछलग्गू नहीं हैं। उनकी अपनी मूल्य–दृष्टि है और जीवन संबंधी अपने मापदंड हैं; जिनकी घोषणा उन्होंने बार–बार की है।

साठोत्तरी कविता के क्षेत्र में राजकमल चौधरी का स्थान निर्धारित करते हुए कुमार कृष्ण की मान्यता है, ''साठ के बाद की कविता नवीन काव्याभिरूचि, नवीन सौंदर्यबोध और नये संवेदन की कविता है। इसमें सामान्य व्यक्ति के आक्रोश, विरोध, विद्रोह, क्षोभ, उत्तेजना, तनाव और छटपटाहट की प्रधानता है। राजकमल चौधरी की 'मुक्ति–प्रसंग' कविता को नयी कविता से अलग हटने का प्रयास माना जाता है। उसे अस्वीकृति की कविता भी कहा गया है। साठोत्तरी कविता समाज की मृत मान्यताओं, टूटती परंपराओं और सामाजिक–राजनैतिक भ्रष्टाचार से क्षुब्ध मानस की अभिव्यक्ति है। उसे आज की बिखरी हुई दोहरी जिंदगी और बदलते मानवीय संबंधों की अभिव्यक्ति कहा जाता है।''[10] राजकमल चौधरी की कविता का मूल उत्स समाज में ही निहित है। उनके ऊपर जो कुछ बाहरी प्रभाव पड़ा था, उस प्रभाव से मुक्त होने की कोशिश के बावजूद वे जीवन और समाज की सच्चाई से मुँह नहीं मोड़ सके। यह राजकमल चौधरी की ईमानदारी थी। इस संदर्भ में धूमिल और नागार्जुन का कथन द्रष्टव्य है–

''उसे जिंदगी और जिदंगी के बीच
कम से कम फासला
रखते हुए जीना था
यही वजह थी कि वह
एक की निगाह में हीरा था
तो दूसरे की निगाह में कमीना था।''[11]

नागार्जुन के शब्द–

''बाहर छलनामय, भीतर–भीतर थे निश्छल
तुम तो थे अद्भुत व्यक्ति, चौधरी राजकमल...
अंधी गलियों से ले आये ऐसा काजल
दर गए प्रौढ़–मति,चकित–मुदित किरणें
कोमल''[12]

राजकमल चौधरी के काव्य पर पड़नेवाले विभिन्न प्रभावों का मूल्यांकन करते हुए सुप्रसिद्ध आलोचक खगेन्द्र ठाकुर का कथन है, ''राजकमल चौधरी बीटनिक आंदोलन, अकविता, अतिकविता आदि नकली प्रवृत्तियों से मुक्त हो जाना चाहते हैं। अपने जीवन के प्रारंभ में वे जिस संघर्ष–चेतना के साथ कविता में आये थे, उसमें लौटने की बात करते हैं–

''वापस लौट जाउँ,
मैं जहाँ एक बार फिर से अपनी यात्रा,
शुरू करने के लिए
(मुक्ति–प्रसंग, पृ0–25)।"[13]

'मुक्ति–प्रसंग' उनकी प्रतिनिधि कविता है, लेकिन उनकी अन्य कविताओं के महत्त्व को कम करके आँकना उचित नहीं है। 'मुक्ति–प्रसंग' राजकमल चौधरी की सर्वश्रेष्ठ कविता है जो आज भी प्रासंगिक है। इसके मूल्यांकन के आधार पर कहा जा सकता है कि राजकमल का काव्य–शिल्प और उनकी मूल्य–दृष्टि दोनों को यहाँ प्रतिनिधित्व मिला है। हिंदी की इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक लम्बी कविता के पक्ष–विपक्ष में बहुत कुछ कहा गया है, जिससे इसके महत्त्व की ही प्रतिष्ठा होती है। राजकमल चौधरी की मूल्य–दृष्टि को समझने के लिए कविता से बाहर उनके वक्तव्यों पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक प्रतीत होता है। स्त्री और स्वतंत्रता संबंधी उनके विचार महत्त्वपूर्ण हैं। स्त्री संबंधी वक्तव्य में उन्होंने कहा है कि अपनी पत्नी जैसी सरल और सच्चरित्र स्त्री की खोज में वह जीवन भर बाहर भटकता रहे। इसी प्रकार स्वतंत्रता को सबसे महत्त्वपूर्ण मूल्य मानने के बावजूद उन्होंने बंधन के महत्त्व को भी स्वीकार किया है। उन्होंने रामनरेश

पाठक को एक पत्र में लिखा था कि आजादी कभी–कभी बड़ी तकलीफदेह होती है। बंधन नहीं होता है तो आदमी गलत गलियों में रोशनी के कतरे ढूढ़ने की गलत कोशिश करता है, और अंधेरे को गले लगाकर कब्र में सो जाता है। एक दिन की डायरी के मुताबिक वे अपनी पीढ़ी को जीवन का वास्तविक अर्थ बतलाना चाहते थे, जो कि शराबखाना, मशीन, अखबार और नींद की गोलियों से परे की चीज होता है। राजकमल चौधरी की कविता और उनके जीवन में सतही तौर पर अनेक प्रकार के विरोधाभास मौजूद रहे हैं, लेकिन उनकी कविता और उनके जीवन की अतल गहराई में सत्य का पुजारी बैठा प्रतीत होता है। उनका साहित्येत्तर जीवन के साथ ही साहित्यिक जीवन भी विवादग्रस्त रहा है। लेकिन उनकी मूल्य–दृष्टि निभ्रांत और प्रखर रही है। उनका जीवन और साहित्य मूल्यों की खोज का उपक्रम है। उनके प्रयास की ईमानदारी पर शक नहीं किया जाना चाहिए। धूमिल ने राजकमल चौधरी के संबंध में ठीक ही लिखा है–

''राख और जंगल से बना हुआ वह
एक ऐसा चरित्र था
जिसे किसी भी शर्त पर
राजकमल होना था।''[14]

राजकमल चौधरी की व्यक्तिगत आस्था की चर्चा करते हुए डॉ. नन्दकिशोर नवल का कथन है, ''एक तरफ राजकमल की तंत्रसाधना चल रही थी, पंचमकार सेवन सहित और दूसरी तरफ फरवरी 1967 में संपन्न हुए आम चुनाव का क्रांतिकारी दृष्टिकोण से विश्लेषण करते हुए कह रहे थेः 'समाज–जीवन, अर्थ–चक्र, शिक्षा–व्यवस्था, कृषि और उद्योग, संस्कार और संस्कृति के सारे मोर्चों पर क्रांति के लिए– आमूल परिवर्त्तन के लिए–जनता को प्रस्तुत करना, केवल हमलोगों का कर्त्तव्य है, क्योंकि अन्य सभी सामाजिक कार्यकर्त्ता, पत्रकार, उपदेशक, शिक्षक, नेता, संन्यासी और राज्याश्रित बुद्धिजीवी स्वार्थ–लाभ और सत्ता की राजनीति में इस तरह उलझ गये हैं कि खेतों में काम करनेवाली जनता और मशीनों में काम करनेवाली जनता उनके पास पहुँच नहीं पाती है और वे लोग जनता के पास जाने की इच्छा नहीं रखते हैं, अब भी नहीं! मैं, राजकमल चौधरी, अपनी तरफ से जनता के पास वापस चले जाने का वादा करता हूँ, मेरी यात्रा वहीं से शुरू होगी।' डॉ. नन्दकिशोर नवल ने राजकमल चौधरी के इस शिव–संकल्प को अक्षरशः उद्धृत करने के बाद अपनी प्रतिक्रिया इन शब्दों में व्यक्त की है, ''इसी विरोध और खींचतान में, जिसमें एक ओर वे स्वयं थे और दूसरी ओर उनका समाज, एक ओर सेक्स था और दूसरी ओर देश–विदेश की राजनीति, एक ओर मूल्यहीनता थी और दूसरी ओर मूल्यों की खोज एवं उनकी स्थापना, एक ओर अबाध स्वतंत्रता थी और दूसरी ओर जनता से प्रतिबद्धता, एक ओर बर्हिगमन था और दूसरी ओर प्रत्यागमन, एक ओर निष्क्रियता थी और दूसरी ओर क्रियाशीलता, एक ओर मृत्यु–कामना थी और दूसरी ओर उत्कट जिजीविषा उनके जीवन और साहित्य दोनों में चलते रहे।''[15]

राजकमल चौधरी के काव्यात्मक व्यक्तित्व की तुलना मुक्तिबोध के काव्यात्मक व्यक्तित्व से करते हुए डॉ. नन्दकिशोर नवल की टिप्पणी है, ''वही आत्मपरकता, वही भावावेग, वही आक्रामकता, वही बिम्ब–श्रृंखला, वही वक्तृत्व–कला और वही सृजनशीलता, लेकिन मिजाज में सबकुछ अलग।''[16] डॉ. नन्दकिशोर नवल के अनुसार 'मुक्ति–प्रसंग', 'राम की शक्ति पूजा' और 'अंधेरे में' के बाद तीसरी सबसे महत्त्वपूर्ण कविता है, तथा इसे समकालीन समाज का एक ज्वलंत दस्तावेज भी माना जाता है। अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', शमशेर की 'टूटी हुई बिखरी हुई', मुक्तिबोध की 'अंधेरे में', राजकमल चौधरी की 'मुक्ति–प्रसंग', एलेन गिंसबर्ग की 'हाउल' और मलयराय चौधरी की 'जख्म' जैसी कई लम्बी कविताएँ अपने संरचनात्मक सौष्ठव के लिए भी जानी जाती हैं।

राजकमल चौधरी पर बीट पीढ़ी, भूखी पीढ़ी और अकविता इन तीनों आंदोलनों का प्रभाव पड़ा, लेकिन उन्होंने इनके प्रभाव को अपने ढंग से ग्रहण किया। उन्होंने महानगर की त्रासदी का अनुभव किया और उसे कविता में ढाला। इन सबके बावजूद उनकी कोशिश यह रही कि 'नींद में भटकता हुआ आदमी' जगे। उनके काव्य की यही विशेषता उनकी कविता को मूल्यवान सिद्ध करती है। आज की बाजारवादी संस्कृति की चर्चा करते हुए राजकमल चौधरी ने अपने एक महत्त्वपूर्ण निबंध 'बर्फ और सफेद कब्र पर एक फूल' में लिखते हैं, ''हमारे समस्त चिंता–विचारों का केन्द्र प्रथम और अंतिम रूप से पैसा हो गया है। भोजन और भोजन के लिए अन्न, और अन्न के लिए पैसे, और पैसे के लिए व्यवसाय या नौकरी, और नौकरी के लिए शिक्षा और सिफारिश, और सिफारिश के लिए परिचय, और परिचय के लिए पैसा... और, संभोग और संभोग के लिए स्त्री, और स्त्री पत्नी हो या वेश्या हो या प्रेमिका, और प्रेमिका के लिए पैसे, और पैसे के लिए व्यवसाय या नौकरी या चोरी और ठगी, कालाबाजार और क्या नहीं....''[17]

समकालीन कविता के कवियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनमें युगसत्य को समझने की अद्‌भुत क्षमता है, तथा उन्हें कवि–कर्म का दायित्वबोध है। दायित्वबोध और कर्त्तव्यनिष्ठा की दृष्टि से राजकमल चौधरी बेहद ईमानदार कवि थे। उन्होंने अपने कर्त्तव्य का निर्वाह पूरी निष्ठा के साथ किया। उनकी इसी विशेषता के कारण धूमिल ने लिखा–

''एक आदमी जो अपनी जरूरतों में निहायत
खरा था
उसे जंगल में
पेड़ की तलाश थी।''[18]

राजकमल चौधरी की जिजीविषा अत्यंत सबल थी। इसलिए धूमिल ने उनकी दृढ़ इच्छाशक्ति की तुलना दूब जैसे घास से की है, जो जलते हुए मकान के नीचे भी हरी–भरी रह जाती है। राजकमल चौधरी सबका कल्याण चाहते हैं, सबके स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं। उन्हें अपनी बीमारी के साथ ही समाज की अस्वस्थता की भी बेहद चिंता सताती रहती है। लोक–कल्याण जैसे मूल्य की रक्षा करने के लिए वे अपनी शारीरिक रूग्णता को दूर करना चाहते हैं। यहाँ उनकी जनवादी चेतना की अभिव्यक्ति इन शब्दों में व्यक्त हुई है–

''सबके लिए सबके हित में अस्पताल चला गया है
राजकमल चौधरी''[19]

समकालीन युग में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बढ़ते प्रभाव के फलस्वरूप भारत सहित संपूर्ण विश्व आर्थिक उपनिवेशवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभाव में आ गया है। इन सबके फलस्वरूप देश और दुनिया में आम लोगों का जीना कठिन से कठिनतर होता जा रहा है। राजकमल चौधरी इस दृष्टि से अपने समय से आगे की कविता लिख रहे थे। आज उनके कवि–कर्म की सार्थकता निरंतर बढ़ती जा रही है। इक्कीसवीं सदी की दुनिया मानव–नियति की दृष्टि से सुरक्षित नहीं है। विश्व की सामान्य जनता का भविष्य कैसा रहेगा, इसे स्वयं तय करना उनके हाथ में न होकर नवीन आर्थिक शक्तियों में चला गया है। इस अदृश्य बंधन से मानव–मुक्ति का रास्ता सरल नहीं है। ऐसी स्थिति में उनकी कविता पूरी दुनिया का मार्गदर्शन कर सकती है। इस अदृश्य शक्ति को राजकमल चौधरी ने बहुत पहले देख लिखा था। समकालीन युग की परिस्थिति की भयावहता को ध्यान में रखते हुए जो संकल्प लिया था, वह इस प्रकार है, ''कामुकता की कसकती जाँघों से, और आम चुनाव जैसे जनतांत्रिक षड्यंत्रों से, लोगों को किस तरह मुक्त किया जाए– यह निर्णय करने का समय आ गया है। अब मानव समुदाय पर किसी तरह की कोई सरकार, किसी भी विचारधारा का कोई धर्म, यहाँ तक की कोई वैज्ञानिक अनुसंधान भी, शांति व्यवस्था कायम नहीं कर सकती। धार्मिक विश्वास अब उठ चुका है। यदि 'ईश्वर' की सत्ता कभी थी, तो वह आज की तारीख में निश्चय ही समाप्त हो चुकी है। राजनेता, वैज्ञानिक और स्त्री अंगों के व्यापारी– ये तीन ही जातियाँ 'जनसामान्य' को भूमंडलीय मुहिम से मिटा देने की हरकतों में लीन हैं। अब यही एक चीज 'वसीयत' की तरह मेरे कवि, मेरे लेखक के पास रह गयी है, जनसामान्य को इन षड्यंत्रों से रू–ब–रू कराने के लिए....।''[20]

देवशंकर नवीन के शब्दों में कहा जा सकता है, ''राजकमल चौधरी की कविताओं पर बात करते हुए अनिवार्यतः यह बात ध्यान में आती है कि सांस भर जिंदगी, पेट भर अन्न, लिप्सा भर प्यार, लाज भर वस्त्र, प्राण भर सुरक्षा– अर्थात तिनका भर अभिलाषा की पूर्ति के लिए मनुष्य धरती के इस छोर से लेकर उस छोर तक बेतहासा भागता और निरंतर संघर्ष करता रहता है। जीवन और जीवन की इन्हीं आदिम आवश्यकताओं– रोटी–सेक्स–सुरक्षा, प्रेम–प्रतिष्ठा, ऐश्वर्य, बल–बुद्धि–पराक्रम के इंतजाम में जुटा रहता है। इसी इंतजाम में कोई शेर तो कोई भेड़िया हो जाता है, जो अपनी उपलब्धि के लिए दूसरे को खा जाता है; और कोई भेड़–बकरा–हिरण–खरगोश हो जाता है, जो शक्तिवानों के लिए आहार और उपकरण भर हो जाता है।''[21] राजकमल चौधरी की कविता इन्हीं प्रतिकूलताओं को समाप्त कर धरती को जीने योग्य बनाना चाहती है, जिसके लिए मानवीय मूल्यों की स्थापना करना एक अनिवार्य शर्त्त है।

राजकमल चौधरी की यह विशेषता है कि न वह हारे हुए कवि हैं, न आत्मनिर्वासित हैं। उन्हें संघर्ष में विश्वास है। वे संघर्षरत कवि हैं। वे आत्मरत कवि भी नहीं हैं। उनकी वैयक्तिकता मानवीयता से जुड़ी है, क्योंकि वे कवि होने के साथ ही मनुष्य भी हैं; समाज का अंग होने के साथ व्यक्ति भी हैं। उन्होंने वैयक्तिक और सामाजिक– दोनों पक्षों की अकुंठ अभिव्यक्ति की है। स्वतंत्रता उनके लिए सबसे बड़ा मूल्य है। वे अराजकता की सीमा तक स्वतंत्र रहना चाहते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनका संस्थाओं में विश्वास नहीं है। वे संस्थाओं की अपरिहार्यता को स्वीकार करते हैं। फिर भी यह कहा जा सकता है कि वे किसी हद तक अतिवादी हैं। वे शरीर में रहकर शरीर से मुक्त होना चाहते हैं और समाज में रहकर समाज से मुक्त रहना चाहते हैं।

निष्कर्ष

सभी तथ्यों पर विचार करने से यह निष्कर्ष सामने आता है कि समय को दूषित करके मानवीय अनुभवों की सार्थक बहुलताओं को गुम करने की वृत्ति का विरोध राजकमल अपने औघड़पन के माध्यम से दर्शाया है। उन्होंने अपने गंभीर उत्तरदायित्व को समझा है। राजकमल चौधरी ने अपनी कविता के माध्यम से देशवासियों को इस निद्रा–स्थिति से झकझोरकर जगाने का प्रयास किया है। पचास वर्षों के बाद भी हम देखते हैं कि राजकमल चौधरी की कविताएँ सामूहिक सामाजिक यातना और सामूहिक मुक्ति की आकांक्षा का सबसे प्रामाणिक और प्रभावशाली दस्तावेज हैं।

सुझाव

कविता के माध्यम से कवि निरर्थक हो चुके मूल्यों के स्थान पर नयी मूल्य–व्यवस्था कायम करना चाहते हैं। आधुनिकता की आँधी में मूल्यों की पतंगबाजी के बीच एक ऐसा सूत्र भी उनके पास है, जिसके सहारे वे एक सच्ची वैज्ञानिक संस्कृति के निर्माण द्वारा मूल्यों की पुनर्स्थापना कर सकते हैं। यह नयी मूल्य–व्यवस्था होगी जो मानव–जाति को त्रस्त करने के स्थान पर आश्वस्त करेगी और सामाजिक प्रगति एवं मानव–मुक्ति के स्वप्न को पूरा करने में सहायक सिद्ध होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *मिश्रा, सं. राजीव कुमार, श्रृंखला : एक शोधपरक वैचारिक पत्रिका, सोशल रिसर्च फाउंडेशन, कानपुर,* Vol-4, ISSUE-10, *जून 2017, पृ.सं.–120,*
2. *राजपाल, हुकुमचंद : समकालीन हिंदी समीक्षा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2003, पृ.सं. –64,*
3. *नवीन, सं. देवशंकर : ऑडिट रिपोर्ट, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.सं.–120,*
4. *मुक्तिबोध, गजानन माधव : चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 1993, पृ.सं.–142,*
5. *नवीन, सं. देवशंकर : राजकमल चौधरी रचनावली, खण्ड–2, भूमिका भाग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण : 2015, पृ.सं.–260,*
6. *चौधरी, राजकमल : बर्फ और सफेद कब्र पर एक फूल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2006, पृ.सं.–111,*

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-1* September- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

7. *अरविन्दाक्षन, ए. : समकालीन हिन्दी कविता, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2010, पृ. सं.–49,*
8. *मंडलोई, सं. लीलाधर : नया ज्ञानोदय, अंक : 164, अक्टूबर 2016, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृ.सं. –35,*
9. *कृष्ण, कुमार : समकालीन कविता का बीज गणित, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2004, पृ.सं.–12,*
10. *उपरिवत्, पृ.सं.–12,*
11. *धूमिल, सुदामा पाड़े : संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृ.सं.–34,*
12. *www.rajkamalchaudhary.blogspost.com/2015/01/blog-post_8,html?m=1*
13. *श्रीवास्तव, सं. एकान्त एवं खेमानी, कुसुम : वागर्थ, अंक : 233, दिसम्बर 2014, कोलकाता, पृ.सं.–08,*
14. *धूमिल, सुदामा पाड़े : संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृ.सं.–34–35,*
15. *'नवल', डॉ नन्दकिशोर : समकालीन काव्य–यात्रा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2004, पृ.सं.–227–228,*
16. *उपरिवत्, पृ.सं.–243,*
17. *चौधरी, राजकमल : बर्फ और सफेद कब्र पर एक फूल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2006, पृ.सं.–47,*
18. *धूमिल, सुदामा पाड़े : संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2013, पृ.सं.–35,*
19. *नवीन, सं. देवशंकर : राजकमल चौधरी रचनावली : खण्ड–2, भूमिका भाग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण : 2015, पृ.सं.–243,*
20. *उपरिवत्, पृ.सं.–319,*
21. *उपरिवत्, पृ.सं.–11,*